जींस

मनोज कुमार पांडेय

जींस

https://www.hindiadda.com/jeans/

इस कहानी के नायक सतीशचंद्र मिश्र उर्फ सत्तू हैं। सत्तू न सिर्फ इस कहानी के नायक हैं, बल्कि इससे अलग भी वह अपने आपको असलीवाला नायक समझते हैं। दिलीप कुमार स्टाइल ट्रेजिडी किंग। सत्तू खूबसूरत और प्रतिभाशाली हैं - ऐसा सिर्फ सत्तू का ही मानना नहीं है बल्कि इसके बारे में उनके क्लास की लड़कियाँ ज्यादा बेहतर बता सकती हैं, जो उनके आसपास चकराने का कोई भी मौका नहीं गँवातीं। पर वे लड़कियाँ या कोई और कुछ भी कहे, सत्तू खुद को खूबसूरत और दिलफरेब तभी लगते हैं जब वह पूरी तरह से उदासी और गम के एक कत्थई धूसर रंग में डूबे हुए होते हैं।

और उदास रहने के लिए सत्तू के पास सौ-सौ बहाने हैं, बल्कि बदले में यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि उदास रहने के लिए उन्हें किसी बहाने की जरूरत ही नहीं पड़ती। एक लंबे अभ्यास क्रम से उनके चेहरे का स्थायी रंग ही उदासी का रंग हो गया है। इसके बावजूद अभी भी वह इस रंग को और पक्का करने का कोई मौका नहीं चूकते। ऐसा करने के लिए उन्होंने अपनी कई पद्धतियाँ विकसित की हैं, जिनकी पैठ अतीत के चलचित्रों से ले कर भविष्य की पटकथाओं तक फैली हुई है। इस सबके बीच अनेक मकड़जाली पगडंडियाँ हैं जिन पर सत्तू घूमते रहते हैं।

अधिकांश व्यक्तियों के जीवन की तरह सत्तू के जीवन में भी अनेक अच्छी-बुरी घटनाओं के बीच कुछ ऐसी घटनाएँ भी घटी हैं, जब मौत उन्हें छू कर निकल गई थी। ऐसा तो सभी के साथ होता है कि मौत छुपमछुपाई खेलती रहती है और बहुत बार जानबूझ कर बगल से सरसराती हुई निकल जाती है। हम मौत को तड़ी मारते हैं और जिंदगी के इलाके में निकल जाते हैं। पर सत्तू! सत्तू उन पलों को याद करते हैं और सोचते हैं कि ऐसे किसी मौके पर वे मर ही गए होते तो उनके घरवालों या आसपास की दुनिया पर क्या असर पड़ता और बेचारे यह देख कर हताश और स्तब्ध हो जाते हैं कि कोई इस बारे में सोचता ही नहीं। किसी के ऊपर कोई फर्क ही नहीं पड़ता। इससे अच्छा तो वे मर ही जाते। पर एक दूसरी कल्पना उन्हें ज्यादा रोमानी लगती है।

मान लीजिए कि ऐसी किसी दुर्घटना में उनका एक हाथ कट गया होता या फिर एक पैर... तो इस तरह से अपनी उदास नायक की छवि गढ़ने में उन्हें और भी आसानी होती। ऐसी किसी भी कल्पना में उनके चेहरे या आँखों को कुछ भी नहीं होता। तब तो नायक की छवि ही खतरे में पड़ जाती है। क्या आपने किसी ऐसे नायक के बारे में सुना है जिसकी नाक ही कट गई हो, जो बिना कानों का हो या जिसकी एक आँख पत्थर की हो।

सत्तू अपने वर्तमान कमरे में लगभग तीन साल पहले किराएदार की हैसियत से आए थे। आज तक उन्होंने मकान मालिक को शिकायत का कोई मौका नहीं दिया। समय पर किराया चुकाते हैं। समय पर आते-जाते हैं। कमरे में मांस-मछली नहीं पकाते। गुटखा-सिगरेट नहीं खाते-पीते। तेज आवाज में रेडियो नहीं बजाते। जोर से किसी से बात नहीं करते और सबसे खास बात यह है कि कमरे पर लड़कियों को नहीं बुलाते बल्कि लड़के भी उनके यहाँ कभी-कभार ही आते हैं। और इससे भी खास बात यह है कि मकान-मालिक के यहाँ कोई बुजुर्ग रिश्तेदार या मेहमान आ जाता है तो मकान मालिक के बच्चों की तरह सत्तू भी उससे नमस्ते कर लेते हैं। मकान मालिक के कई रिश्तेदार उनकी इस अदा पर फिदा हैं और आज के जालिम जमाने में ऐसे लड़कों को अच्छे संस्कारों का फल मानते हैं।

सत्तू के बाहरी व्यवहार के उलट उनका कमरा अजब-गजब चीजों से भरा है। भरा और भयानक रूप से बिखरा। दीवालों पर पत्रिकाओं और अखबारों से काटी गई अजीबोगरीब तस्वीरें। कहीं नेवले और साँप की लड़ाई, कहीं मंगल की सतह पर जमा पानी तो कहीं बरामूडा ट्रैंगल का काल्पनिक स्केच तो कहीं चेहरे पर अनंत रेखाओंवाली कोई बुढ़िया। ऐसे ही बहुत सारे चित्र और तस्वीरें और उनमें आपस में कोई तालमेल ढूँढ़ना लगभग नामुमकिन। ऐसे ही तरह-तरह की किताबें, जो उनकी कोर्सवाली किताबों के पीछे से झाँकती रहती हैं। भूतों-प्रेतों के किस्से, जासूसी उपन्यास, रहस्य कथाएँ, हस्तरेखा और अंक ज्योतिष की किताबें, सम्मोहन शक्ति बढ़ाने के तरीके, चित्त को एकाग्र कैसे करें, जैसी तमाम तरह-तरह की किताबें।

सत्तू के पढ़ने की मेज पर एक बड़ा अर्द्धचंद्राकार आईना ऐसे कोण पर रखा है कि जब वह पढ़ने के लिए कुर्सी पर बैठें तो उनका चेहरा आईने में जरूर दिखाई पड़े। जब सत्तू पढ़ नहीं रहे होते हैं तो कई बार आईना देखते हुए दिन गुजार देते हैं। यूँ तो उनके पास एक छोटा आईना भी है, जिसमें कभी-कभी वह बिस्तर पर लेटे-लेटे अपना अक्स निहारते हैं, पर इस छोटे आईने में वो बात कहाँ जो उस अर्द्धचंद्राकार आईने में है। वह तो जादुई आईना है जिसमें एक अजीब-सा साँप की आँखों जैसा सम्मोहन है। जो अपनी आँखों में झाँकने के लिए सत्तू को बार-बार खींचता है और खींचता ही चला जाता है। आईना नहीं एक जादुई गुफा है, जिसका दूसरा सिरा अतीत में जा कर खुलता है। एक तिलस्मी दरवाजा है, जिसके भीतर जाने पर उस तिलिस्म का शिकार बने बिना खैर नहीं। एक बायस्कोप है जिसके भीतर कुछ नहीं है मगर इतना कुछ है कि देखते-देखते आँखों की पूरी उमर कम पड़ जाए। इस आईने के जरिए जब बाहर के सत्तू और आईने के भीतर के सत्तू की आँखें मिलती हैं तो देर-दूर तक मिली रह जाती

हैं। फिर सत्तू की आँखें अपने घर में बिछलने लगती हैं, जिस्म पीड़ा से ऐंठने लगता है, दाँत दाँतों पर कस जाते हैं, नाक थोड़ा फूल कर बाहर आ जाती हैं, आँखों के नीचे साँवलापन फैल कर गायब हो जाता है और आखिरकार आँखों की पुतलियाँ स्थिर हो कर वीरान हो जाती हैं। इसके बाद सत्तू आईने में समा जाते हैं और आईने के अंदर जाते ही सत्तू उड़ने लगते हैं।

उड़ते-उड़ते सत्तू अपने गाँव पहुँच जाते हैं। वहाँ गाँव के किनारे पेड़ों की घनी झुरपुट के बीच एक कच्चा खपड़ैल घर दिखता है। यह खपड़ैल सत्तू को इसलिए दिख रहा है क्योंकि वह ऊपर हैं और धीरे-धीरे नीचे आ रहे हैं। नीचे आ कर वह आँगन के ऊपर पेट के बल लटक जाते हैं। आँगन बड़ा है। आँगन के कोने में नींबू का एक पेड़ है जिसमें हरे-हरे नींबू लटक रहे हैं। कुछ पके हुए नींबू नीचे भी गिरे हुए हैं। बगल में ही आम का एक युवा हो रहा पेड़ है जिसमें आधे पेड़ पर कत्थई रंग की कोंपलें फूटी हुई हैं और आधे पेड़ पर बौर आए हुए हैं। सत्तू पल भर को आम के बौर और नींबू की मदमाती महक में डूब जाते हैं कि तभी नीचे से एक चीख उभरती है।

आँगन के एक छोर पर एक काला भुजंग बूढ़ा है और दूसरे छोर पर गोरी चिट्टी अधेड़ औरत। बूढ़े के हाथ में लाठी है और औरत के हाथ में दही मथनेवाली मथानी। दोनों के बीच में एक रोती, तड़पती, गिरती, भागती युवती है। बूढ़ा सत्तू का दादा है, अधेड़ औरत सत्तू की दादी है और रोती-चीखती युवती सत्तू की माँ है। सत्तू की माँ के बाल खुले हैं। धोती खुल गई है। माथे का सिंदूर खून के साथ मिल कर नीचे बह आया है। सत्तू की माँ साया-ब्लाउज में इधर से उधर भाग रही है। अधेड़ औरत यानी दादी बार-बार बूढ़े को ललकार रही है और बूढ़ा यानी कि दादा हर ललकार के साथ हुमक कर लाठी मारते हैं। माँ हर प्रहार के साथ भीषण आर्तनाद करती है। इसके बाद दादी और दादा दोनों मिल कर माँ को गिरा देते हैं और उनके ऊपर बैठ जाते हैं। दादी चिल्लाते हुए बोलती हैं - 'हरामखोर... हरजाई... चिल्लाएगी... गाँव भर को तमाशा दिखाएगी... ले और चिल्ला।'

इसके बाद दादी ने मथानी से माँ के सीने पर मारा, चेहरे पर मारा, टाँगों के बीच में मारा। माँ हर चोट पर हलाल होते हुए जानवर की तरह डकराई और लगातार डकराती रही, फिर बेहोश हो गई।

सत्तू माँ पर पड़ी हर चोट के साथ उछल-उछल जाते हैं। सत्तू नीचे आना चाहते हैं। चाहते हैं कि आ कर दादा की लाठी उनके ही सिर पर दे मारें पर बीच में समय की एक मोटी दीवार है जिसे भेद पाना सत्तू के बस की बात नहीं। इस दीवार के बाहर असहाय

खड़े सत्तू कुछ भी नहीं कर सकते, सिवाय इसके कि वह माँ को पिटते, तड़पते, डकराते और बेहोश होते हुए देखें। आखिर में जब माँ बेहोश हुई तो साथ में सत्तू भी बेहोश हो गए। इसी के साथ आकाश में उनका संतुलन बिखर गया और वह गिरते हुए नींबू के पेड़ पर आ कर टँग गए। नींबू के काँटों और टहनियों से लहूलुहान हो कर जब सत्तू की चेतना वापस लौटी तो उन्हें दिखाई पड़ा कि यह दृश्य वे अकेले ही नहीं देख रहे हैं बल्कि पीछेवाले जंगले से जिस पर कुछ बोरियाँ और इधर-उधर का जाने क्या-क्या सामान रखा है, के बीच से और भी दो आँखें वही सब कुछ देख रही हैं, जो सत्तू देख रहे हैं। नींबू के उस कँटीले पेड़ पर टँगे सत्तू ने पाया कि वे आँखें किसी और की नहीं बल्कि उन्हीं की हैं और वह अपनी उन आँखों में डूब गए।

सत्तू आगे जहाँ पहुँचते हैं, वहाँ बरसात का मौसम है। रात का समय है। चारों तरफ जहाँ तक नजर जा रही है, एक काला अँधेरा फैला हुआ है। बादलों की गड़गड़ाहट से कान के पर्दे फट रहे हैं। रह-रह कर बिजली चमक रही है। बिजली चमकने पर नीम का एक पुराना पेड़ दिखता है जिसकी एक डाल पर सत्तू छिपकली की तरह चिपके हुए हैं। बिजली फिर चमकती है तो एक कुआँ दिखता है जिसमें ऊपर तक काला पानी भरा हुआ है। फिर चमकती है तो नीम के पेड़ के नीचे चारपाई पर एक बारह-तेरह साल का लड़का चड्ढी और कमीज पहने पड़ा दिखता है। जब एक कड़कड़ाहट के साथ बिजली चमकती है तो लड़का काँप-काँप जाता है और जैसे चारपाई में ही समा जाने की कोशिश करता है। चारपाई से थोड़ा आगे एक घर है, घर में एक किवाड़ है, किवाड़ में एक साँकल है जो इस लड़के के लिए बंद हैं। सत्तू खोजते हैं कि उन्हें लड़के की आँखों में आँसू की बूँद दिख जाए पर नहीं दिखती। लड़का अपने होंठों को दाँतों के नीचे दबाए काँप रहा है पर रो नहीं रहा। थोड़ी देर में पानी बरसने लगता है तो सत्तू सोचते हैं कि लड़का तो नीचे है और चुप है तो फिर कौन रो रहा है, जिसके आँसुओं से दुनिया भीग रही है। भीगते हुए यही सब सोचते-सोचते सत्तू काँपने लगते हैं तो पेड़ की डाल पर उनकी पकड़ छूट जाती है और वे बेआवाज चारपाई पर गिर जाते हैं और चारपाई पर लेटे लड़के के साथ एकमएक हो जाते हैं। लड़का करवट बदल कर पीठ के बल लेट जाता है। उसका बदन रह-रह कर थरथरा रहा है। वह सिहर-सिहर जा रहा है और आखिरकार चारपाई के चारों तरफ पानी ही पानी दिखाई देने लगता है। लड़का चारपाई सहित पानी में डूब जाता है।

अगले दिन सूरज रोज की तरह ही निकलता है। लुकता-छिपता। आसमान साफ जैसा है पर हवा में नमी तैर रही है। सामने घास का एक दूर तक फैला हुआ मैदान दिखता है। ध्यान से देखने पर पता चलता है कि बीच में वह एक जगह के आसपास हिल-सा

रहा है। वहाँ हर मिनट बाद घास का एक गोला थोड़ा-सा ऊपर आता है फिर उसी घास के जंगल में गुम हो जाता है। थोड़ी देर में एक व्यक्ति खड़ा होता है। ये सत्तू के पिता हैं। वह जोर की आवाज लगाते हैं। सत्तू, ओ सत्तू! बिट्टी, ओ बिट्टी! आ कर घास ले जाओ। इस पुकार के जवाब में एक चौदह-पंद्रह साल की लड़की और वही रातवाला लड़का लसढ़म-फसढ़म खाँची ले कर आते हैं।

घास के इस जंगल में एक अधेड़ औरत भी है। यह वही अधेड़ औरत है जो आँगन में सत्तू की माँ के सीने पर चढ़ी बैठी थी - यानी कि सत्तू की दादी। वह खाँचियों में घास भरती हैं और बारी-बारी से दोनों के सिर पर रखवा देती हैं। घास की जड़ों में गीली मिट्टी चिपकी हुई है जो बार-बार झटकने के बावजूद नहीं निकली है और उसमें से मटमैला पानी चू रहा है। एक छोटे-से पानी भरे गड्ढे में जहाँ ये घास धुलने के लिए डाली जानी है वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते दोनों घास से टपकते मटमैले पानी में भीग चुके हैं। लड़की गड्ढे में थोड़ा गहरे पानी की खोज में सिर पर खाँची लिए आगे बढ़ती जाती है। पीछे-पीछे लड़का है। अचानक लड़की का पाँव पानी में फिसलता है और पीछे गिरते हुए वह लड़के से टकराती है। दोनों पानी में गिर जाते हैं। दोनों उठते हैं, मिल कर खाँचियों से घास निकालते हैं, खींच-खींच कर घास धुलने लायक गहराई में डालते हैं और इस क्रम में अनायास ही खेलने लग जाते हैं। दोनों हुप-हुप करते हुए एक-दूसरे पर पानी उलीचने लग जाते हैं। ऐसे ही खेलते-खेलते देर हो जाती है और उन्हें पता नहीं चलता।

तभी पीछे से एक बड़ा-सा हाथ बढ़ता है और लड़की की टाँग पकड़ लेता है। लड़के के पलटते-पलटते एक जोरदार घूँसा उसकी पीठ पर पड़ता है। लड़का भागने की कोशिश करता है तो सामने वही अधेड़ दादी दिखती हैं जिनके काले-सफेद बाल हवा में उड़ रहे हैं। लड़का दुबारा पीछे पलटता है तो वही मजबूत हाथ जिसने थोड़ी देर पहले लड़की की टाँग पकड़ी थी, अब की बार लड़के के बाल पकड़ता है और दोनों को घसीट कर एक साथ बाहर लाता है। इस छोटे गड्ढे के बगल में एक छोटी-सी तलैया है, जिसमें पानी बहुत गहरा नहीं है पर दोनों के डूबने के लिहाज से काफी है।

वे जो दोनों के पिता हैं, दोनों को ले जाते हैं और बारी-बारी से उसी तरह तलैया में उछाल देते हैं जिस तरह से वह अभी थोड़ी देर पहले घास के गोले उछाल रहे थे। दादी पिता को लगातार बढ़ावा देती दिखाई पड़ती हैं। बाहर कोई बचाव न देख लड़का पानी में डूब जाने का निश्चय करता है। लड़के का चेहरा पानी के ऊपर निकालता है। लड़का जल्दी से एक हकबकाई हुई साँस खींचता है, आँख मिचमिचाता है और सब कुछ आखिरी बार देखने की कोशिश करता है। इसके बाद वह बाहर आने के बजाय नीचे की

तरफ डुबकी लगा देता है। पानी में नीचे एक पथरीली नुकीली चट्टान है। लड़का चट्टान को अपने नन्हें हाथों से कस कर पकड़ लेता है और तय करता है कि अब वह ऊपर नहीं जाएगा। लड़के को देर तक न पा कर पिता इधर-उधर देखते हैं फिर पानी में कूद जाते हैं। लड़की इस बीच मौका पा कर घर की तरफ निकल भागती है। पिता पल भर में लड़के को बाहर निकाल लाते हैं। लड़का बेसुध है। पिता लड़के का पेट दबाते हैं तो मुँह से पानी के साथ एक फुदकती हुई जिंदा मछली भी निकलती है। पिता सकते और पछतावे की हालत में हैं कि दादी चिल्लाती हैं - पंडित की औलाद हो कर मछली खा लिया। हे भगवान, हो। पता नहीं कहाँ का कुलच्छनी हो कर जन्मा है। पिता ने एक अजीब-सी भयानकता के साथ दादी को देखा और बोले - 'अम्मा, तुम चुप रहोगी कि नहीं।'

पानी के ऊपर स्तब्ध खड़े सत्तू पिता को ध्यान से देखने लगे जैसे कि पिता को उन्होंने पहली बार देखा हो। पिता और पछतावा! हो ही नहीं सकता। इसी के साथ सत्तू पानी में कूद जाते हैं और वही पत्थर पकड़ कर चिपक जाते हैं जहाँ थोड़ी देर पहले नन्हा सत्तू चिपका हुआ था। सत्तू को पता नहीं है कि इस बीच वह तलैया बची ही नहीं है। उसकी जगह एक प्राथमिक पाठशाला खड़ी हो चुकी है जहाँ नन्हे सत्तू की उम्र के बच्चे अभी भी दो एकम दो, दो दूनी चार की पढ़ाई करते हैं।

सत्तू डूब नहीं पाते तो बरसात से जाड़े में पहुँच जाते हैं। जहाँ एक पुराने कच्चे घर का खंडहर है, जिसमें दक्षिण और पश्चिम की दीवालों के कुछ हिस्से बचे हुए हैं। पूरब की तरफ से पूरी ऊँचाई पर धूप आ रही है। एक चारपाई है, जिस पर सत्तू के पिता और दादी बैठे हुए हैं। चारपाई से नीचे एक जूट की बोरी पर छह-सात साल का एक लड़का पढ़ रहा है। सत्तू के पिता लड़के से पूछते हैं कि - 'तेरह सत्ते कितना?' लड़का पिता को डरते हुए देखता है फिर हकलाते हुए कहता है कि बताऊँ... बताऊँ... और इसी के साथ एक हथौड़े जैसा हाथ पीठ पर पड़ता है। लड़का कई-कई बार पलट जाता है। मिट्टी में कंकड़ों की भरमार है। लड़का उसी मिट्टी में घिसट गया है। नाक, कान, गाल, हाथ, कुहनी कई-कई जगह से छिल गए हैं। लड़के के कलेजे में एक हूक-सी उठती है, पेट से सब कुछ बाहर निकलने को होता है पर नन्हा लड़का उसे गले में ही घोंट जाता है। उसके गले से चीख तक नहीं निकलती। गले से निकलता है... तेरह सत्ते इक्यानबे।

सत्तू चारपाई और सूरज के बीच में आ जाते हैं। वह चाहते हैं कि चारपाई पर धूप पड़नी बंद हो जाए, जिससे कि पिता और दादी चारपाई के साथ कहीं और चले जाएँ और वह छोटे सत्तू की पीठ सहला सकें। या कुछ ऐसा कर सकें कि मुँह से तेरह सत्ते इक्यानबे की जगह खुल के रुलाई आ जाए... कि जितना जहर उसके भीतर चला जा रहा है

उसका कोई तो हिस्सा बाहर निकल सके पर फिर वही बात कि बीच में समय की एक अभेद्य दीवार है, जिसे भेद पाना सत्तू क्या किसी के लिए भी मुमकिन नहीं। जहाँ कभी यह खंडहर हुआ करता था वहाँ अब नया पक्का घर बन चुका है और जिस पुराने घर में सत्तू का बचपन बीता है वह गिरा दिया गया है और घर की दीवालों की मिट्टी घर के पश्चिम की तरफ की गड़ही पाटने में काम आई है। गड़ही पाट कर वहाँ दो आम और एक कटहल के पेड़ लग चुके हैं जो इतने बड़े हो गए हैं कि फल भी देने लगे हैं।

ऐसे ही सत्तू के आईने में नीम का एक पेड़ है जिसकी एक डाल पर एक जींस लटकता हुआ दिखाई पड़ता है। आईने में इस जींस का रूप हमेशा बदलता रहता है। मौसमों की मार खाता हुआ, बदरंग होता हुआ, सड़ा हुआ, नुचा हुआ जिसके एक हिस्से को चिड़िया अपने घोंसले के लिए उठा ले गई होगी। कभी नया तो कभी फटा हुआ। कभी भीगा-भीगा या जिसमें से पानी चूता है तो कभी जेठ की धूप में धुआँ-धुआँ होता हुआ।

इस जींस की भी एक मुख्तसर-सी कहानी है। जब सत्तू दसवीं की परीक्षा देने के बाद माँ के साथ बुआ के यहाँ गए थे तो वहाँ बुआ ने उन्हें कपड़े खरीदने के लिए पैसा दिया। सत्तू ने अब तक जींस कभी नहीं पहनी थी पर वह बहुत दिनों से जींस के लिए ललचा रहे थे। सत्तू अपनी बुआ के लड़के के साथ बगल के मुंशी पुलिया बाजार गए और अपने लिए एक खूब चुस्त-सी जींस की पैंट खरीद लाए। कहने की जरूरत नहीं कि यही जींस पहन कर सत्तू अपने घर लौटे।

सत्तू जब माँ के साथ घर लौटे तो दादी बेतहाशा गुस्से से भरी हुई थीं। माँ ने जिस दिन वापस आने के लिए कहा था, उसके पूरे तीन दिन बाद लौट कर आई थीं। बुआ आने ही नहीं दे रही थीं और माँ ने भी सोचा होगा कि वह कोई मायके में थोड़े ही हैं कि दादी नाराज हो जाएँगी। वह तो उन्हीं की बेटी के यहाँ हैं, पर माँ दादी को कायदे से कभी भी नहीं समझ पाईं।

सत्तू और माँ जब बुआ के घर से निकल कर मुंशी पुलिया से वाया मुकुंदपुर होते हुए घर पहुँचे तो दादी आजिजी और गुस्से से सत्तू और उनकी माँ की राह देख रही थीं। घर और बाहर दोनों के कामों के लिए सत्तू की दीदी घर में थी, पर थोड़े-बहुत काम तो दादी के पाले में आ ही गिरे थे और इससे भी बढ़ कर यह उनके आतंकी अनुशासन को चुनौती थी। तो सुबह लगभग ग्यारह बजे जब सत्तू और उनकी माँ घर पहुँचे तो दादी ने किवाड़ ही नहीं खोला। दोनों बहुत देर तक किवाड़ खुलने का इंतजार करते घर की देहरी पर बैठे रहे। थोड़ी देर बाद माँ रोने लगीं तो सत्तू का मन भी रोने को हो आया, पर सत्तू रोए नहीं। सत्तू ने किवाड़ खूब जोर-जोर से भड़भड़ाया फिर लात मारी। लात मारते हुए

गुस्से और बेध्यानी भरे जोश में उनका एक पैर ज्यादा ऊपर उठ गया, जिससे दूसरे पैर का संतुलन गड़बड़ा गया और सत्तू भहरा कर नीचे आ गए।

तभी किवाड़ खुला। दादी गुस्से में चिल्लाते हुए प्रकट हुईं और बोलीं - बाहर से दुरदुरा के पेट भर गया है तो किवाड़ ही तोड़ डालोगे। चार दिन बाहर क्या छुछुवा आए बहुत चर्बी चढ़ गई है। दादी का पूरा ध्यान सत्तू के ऊपर था। आते ही उन्होंने सत्तू के ऊपर छड़ियों की बौछार कर दी। सत्तू पहले से ही गुस्से में थे, ऊपर से गिर जाने के कारण खिसिया भी गए थे सो उन्होंने छड़ी पकड़ ली और अपनी तरफ जोर से खींचा। दादी ने छड़ी नहीं छोड़ी और उसी के साथ नीचे आ गिरीं। गिरते ही दादी ने छड़ी छोड़ दी और दूर महुआ के पेड़ के नीचे जा कर बैठ गईं और गालियाँ बकने लगीं।

दादी ने दिन भर न खाया, न नहाया, बस गालियाँ बकती एक टुटहे खटोले पर पड़ी रहीं। थोड़ी देर बार सत्तू का गुस्सा डर में बदल गया। पिता के घर लौटने का समय आ रहा था। सत्तू दादी के पास पहुँचे और दादी के पैर पकड़ लिए। सत्तू ने उन्हें मनाने की बहुतेरी कोशिशें कीं पर दादी टस से मस नहीं हुईं।

पिता आए तो दादी उन्हें रोती और गालियाँ बकती मिलीं। उन्होंने साइकिल खड़ी की और दादी के बगल में जा कर बैठ गए। दादी ने उन्हें जो कुछ बताया उससे पिता आगबबूला हो उठे। थोड़े दिनों पहले ही नीम की टहनियों की कटाई हुई थी। नीम की टहनियाँ अपने चूल्हे में जाने का इंतजार करती हुई सूख रही थीं। पिता ने एक टहनी उठाई और सत्तू को पीटते हुए घर से बाहर खींच लाए। पीछे चिल्लाती हुई माँ बाहर आईं। दीदी आईं। दोनों दूर खड़े रो रहे थे और पिता पूरी ताकत से सत्तू पर प्रहार कर रहे थे। एक टहनी टूटी, दो टहनियाँ टूटीं। पता नहीं कितनी टूटतीं, सत्तू की जान की कीमत कितनी टहनियाँ होतीं, क्या पता?

उधर सत्तू 'अरे बाबू मर जाऊँगा', 'जो कहोगे वही करूँगा', 'मैंने कुछ नहीं किया' जैसे अनेकों शब्द और वाक्य तेज-तेज चिल्ला कर बोल रहे थे कि वह सब आज भी अंतरिक्ष में कहीं गूँज रहे होंगे। सत्तू को इतनी पीड़ा हो रही थी कि कोई देवी या देवता अगर कहीं सचमुच रहे होते तो सत्तू की पीड़ा से उनका आसन डोल गया होता। उन्होंने भगवान को भी आर्त स्वर में पुकारा था, 'अरे राम मर जाऊँगा', 'अरे भगवान हो', पर सत्तू गज नहीं थे न ही उनके पिता ग्राह, फिर भगवान उन्हें बचाने भला क्यों आते। आखिरकार सत्तू को बचाने आई एक कुतिया।

कुतिया का नाम गुलब्बो था। गुलब्बो जब छोटी-सी थी तभी न जाने कौन उसे सत्तू के घर के पास छोड़ गया था। उसके बाद गुलब्बो सत्तू के घर पर ही रह गई। यही गुलब्बो

सत्तू को पिटते देख लगातार भौंक रही थी और सत्तू और उनके पिता के चारों ओर बेचैनी से चक्कर काट रही थी। जब सत्तू जमीन पर गिर गए और उनकी चीख आसमान कँपाने लगी तो गुलब्बो की बर्दाश्त के बाहर हो गया। वह उछली और उसने सत्तू के पिता का डंडेवाला हाथ अपने मुँह में भर लिया। पिता हकबका गए और गुलब्बो को खुद से दूर ढकेलने लगे। गुलब्बो ने जब किसी तरह उन्हें छोड़ा तो वे डंडा ले कर उसके पीछे लपके। इस बीच माँ और दीदी सत्तू को अंदर टाँग ले गईं और कोठरी में बंद हो गईं। सत्तू की दादी पूरे समय निर्लिप्त भाव से महुआ के पेड़ के नीचे लेटी रहीं।

पिता लौंटे तो उनके हाथों से खून टपक रहा था। गुलब्बो भाग गई थी। पिता घर में घुसे तो उन्हें सामने ही सत्तू की नई-नकोर जींस टँगी दिख गई। पिता जींस पर टूट पड़े। नई जींस थी, पिता को काफी ताकत लगानी पड़ी फिर भी वह जींस को नहीं फाड़ पाए तो थोड़ी दूर पर टँगी कुदाल की तरफ झपटे। वे जींस को ले कर बाहर आए और उसे जमीन पर रख उस कर कुदाल से दनादन प्रहार करने लगे। फिर उन्होंने जींस उठाई और उसे ऊपर की तरफ उछाल दिया। बगल में नीम का वही नंगा पेड़ था। जिसकी टहनियाँ थोड़ी देर पहले सत्तू का बदन चूम रही थीं। पेड़ पर एक भी पत्ती नहीं थी, डालें ऐसी लग रही थीं जैसे पेड़ के हाथों की उँगलियाँ काट ली गई हों। ठूँठ और दहशत पैदा करनेवाली। सत्तू की जींस एक ऐसी ही ठूँठ डाल पर जा कर टँग गई। नीम के नंगे पेड़ पर टँगी हुई एक लहूलुहान जींस। इस समय अगर सत्तू को भी ऊपर की तरफ उछाल दिया जाता तो यकीनन वह भी अपनी जींस की तरह ही टँगे नजर आते। अपनी तरफ से बेहरकत पर जिस तरफ हवा चले उसी तरफ झूलते हुए।

बाद में जींस की एक टाँग से हो कर नीम की एक टहनी निकल आई जो मोटी हो कर डाल में बदल गई। दूसरी टाँग वैसे ही लटकती रही। जेबें गिलहरियों का अड्डा बन गईं। वह जींस बहुत दिनों तक ऐसे ही पेड़ पर लटकती रही। सत्तू जब भी जींस की तरफ देखते उनकी आँखों में जमाने भर की पिसी लाल मिर्च भर जाती।

इसी लटकती हुई जींस में एक दिन एक साँप दिखा। डाल और जींस के बीच में अपने लिए जगह बनाए हुए। सत्तू की दादी ने देखा तो उन्हें लगा कि यह किसी के ऊपर गिर गया तो पता नहीं क्या हो। सो एक दिन जब उन्होंने साँप को जींस से निकल कर बाहर जाते हुए देखा तो दौड़ कर कटवाँसा उठा लाईं। इस बीच पता नहीं उसमें वही साँप वापस लौट आया था या कि जींस के भीतर दूसरा साँप भी था जिसके बारे में सत्तू की दादी को पता नहीं था पर जो हुआ वो यह कि जब दादी कटवाँसे से जींस को खींच रही थीं तो ऊपर से जींस के बजाय साँप का एक कटा हुआ सिर गिरा जो दादी के माथे से चिपक गया। दादी कटवाँसा लिए-लिए ही गिरीं और थोड़ी देर में ही मर गईं।

जिस दिन दादी मरीं उसी दिन सुबह के समय जब सत्तू अपने जादुई आईने का एंगल सही कर रहे थे, आईना गिरा और चकनाचूर हो गया। सत्तू सिर थाम कर वहीं बैठ गए जैसे उनका सब कुछ बैठे-बैठे ही लुट गया हो। पर अब हो भी क्या सकता था! उन्होंने भारी मन से टुकड़े बटोरे और बाहर फेंक आए। जब उन्हें दादी के मरने का पता चला तो उन्हें दादी के मरने का कोई रंज नहीं हुआ बल्कि वह एक ऐसी उत्फुल्लता से भर गए जिसने आईना टूट जाने का पूरा गम एक ही झटके में मिटा दिया। उन्हें खुशी हुई कि वो जींस ही दादी के अंत का सबब बनी।

इन दिनों सत्तू इंटरमीडिएट के बाद की पढ़ाई के लिए के लिए इलाहाबाद में थे। पिता का डर न रहा होता तो वह घर के बजाय सीधे रसूलाबाद घाट ही पहुँचते जहाँ दादी को जलाया जाना था। फिलहाल जब वह घर पहुँचे तो पिता रोते हुए मिले। माँ शांत थीं। दादी को घर के आगे बरामदे में लिटाया गया था। दादी का मुँह नहीं ढँका गया था। लाश के चारों ओर पिता और माँ के अलावा गाँव की दूसरी औरतें और आदमी फैले हुए थे। दादी का चेहरा साँप के जहर से काला पड़ गया था। सत्तू ने दादी का चेहरा देखा तो उनके मन में एक भयानक घृणा का भाव पैदा हुआ कि इसी बुढ़िया की वजह से जीवन में न जाने कितनी क्रूर यादें हैं। यह तो ऊपर गई पर वह क्या कभी उन यादों से मुक्त हो पाएँगे। नीम के पेड़ पर अभी जींस के चीथड़े लटक रहे थे। सत्तू को अपना नई जींस याद आई। अपनी पहली और आखिरी जींस। उस घटना के बाद से सत्तू ने फिर कभी जींस नहीं पहनी, इसके बावजूद कि जींस उन्हें जम कर सम्मोहित करती है। जींस पहने हुए लड़के-लड़कियाँ उन्हें खूब चुस्त-दुरुस्त लगते हैं पर सत्तू जींस नहीं पहनते। एक पीड़ा भरी विरक्ति बैठ गई है उनके भीतर। जब भी कभी वह इस बारे में सोचते हैं उन्हें अपनी जींस याद आने लगती है। नीम के पेड़ पर लटकती कटी-फटी जींस। उन्हें लगता है जींस नहीं, वो खुद ही नीम के ठूँठ पेड़ पर टँगे हुए हैं। इसी के साथ उन्हें वो भयानक मार याद आई। उन्हें पिता का जींस फाड़ना याद आया। उन्हें गुलब्बो कुतिया याद आई और इस तरह सत्तू रोने लगे। फिर रोते-रोते वहीं बैठ गए।

दादी की लाश के पास बैठ कर रोते हुए सत्तू ने पहली बार सोचा कि दादी ऐसी क्यों थीं। क्या दादी माँ के पेट से ही इतनी क्रूर हो कर पैदा हुई थीं? क्या वह बचपन से ही किलकारियों की जगह भयानक सिसकारियाँ भरती थीं? सत्तू को अपने ऊपर अचरज हुआ कि यह सवाल उनके दिमाग में पहले क्यों नहीं आया, जबकि आना चाहिए था। और बार-बार आना चाहिए था। बाद में वह वैसे तो दूसरे जरूरी कामों में मसरूफ हो गए पर अगले दो दिनों तक यह सवाल लगातार उनकी चेतना पर चोट करता रहा। इन दो दिनों में सत्तू का घर तमाम रिश्तेदारों से भर गया। सत्तू की दोनों बुआ आ चुकी

थीं। छोटी बुआ अपने दो बच्चों और पति को भी साथ लाई थीं। इसके अलावा दादी की एक बूढ़ी ननद, दादी के भाई, सत्तू की मौसी और मामी तथा गाँव की और तमाम औरतें और मर्द जो दिन भर आते-जाते रहते।

सत्तू ने पाया कि इन दिनों घर दादी की यादों से भर गया है। पिता से ले कर पिता के मामा तक, बुआ से ले कर पिता की बुआ तक या गाँव की दूसरी बूढ़ी औरतें भी, सब के सब जो बातें कर रहे थे, उसका एक बड़ा हिस्सा दादी अनायास ही घेर ले रही थीं। दादी हर किसी के भीतर एक खास तरह से उपस्थित थीं। सत्तू जब भी किसी को दादी के बारे में बात करते सुनते उनके कान वहीं लग जाते। वह दादी से जुड़ी सारी बातों को अपने भीतर उठ रहे अनगिन सवालों से जोड़ने की कोशिश करते। इस तरह दो दिनों में वह दादी के बारे में बहुत कुछ जान चुके थे पर अभी भी उनमें किसी केंद्रीय बिंदु का अभाव था, जिसके आसपास वह सारी बातों को जोड़ कर रख पाते या कोई एक मुकम्मल तस्वीर बना पाते।

तीसरे दिन माँ ने सत्तू को बुलाया और कहा कि वह दादी का कमरा साफ कर दें तो बरामदे का सामान उनके कमरे में डाल कर बरामदा खाली किया जा सके। दादी के कमरे में पहुँच कर सत्तू ने पाया कि ज्यादा कुछ काम नहीं है। दादी की चारपाई पहले ही किसी ने बाहर निकाल फेंकी है। बस, खूँटियों पर कुछ कपड़े टँगे हुए हैं और कमरे के एक कोने में ईंटों के ऊपर एक जंग खाया बक्सा पड़ा है। बक्से में ताला बंद था। सत्तू जब छोटे थे तो ये बक्सा उनके लिए एक खेल की तरह था। दीदी कहती बक्से में ये होगा तो सत्तू कहते, नहीं बक्से में वो होगा। दीदी कहती बक्से में चाँदी होगी तो सत्तू कहते बक्से में सोना होगा। ऐसे ही खेल चलता और बक्से में सोने-चाँदी से ले कर गुड़-लड्डू या शेर-बाघ तक होने का संभावना व्यक्त की जाती। खेल याद आया तो खेल-खेल में दीदी के साथ हुए तमाम झगड़े याद आए और सत्तू मुस्कराए। पर तुरंत ही बचपन का खेल उनके सामने एक ठोस सवाल की शक्ल में उपस्थित हो गया कि बक्से में क्या है। बक्से में लगे ताले की चाभी ढूँढ़ने में उन्हें जरा भी मेहनत नहीं करनी पड़ी। दादी बक्से की चाभी काले सूती डोरे में डाल कर हमेशा गले में पहने रहती थीं। सत्तू उस चाभी के बारे में पूछने के लिए माँ के पास जा ही रहे थे कि उन्हें ताखे पर वैसे ही डोरे में उलझी चाभी दिख गई।

सत्तू ने चाभी उठाई और बक्से का ताला खोलने लगे। बक्सा खुलने पर उन्होंने देखा कि उसमें सबसे ऊपर दादी की कुछ सूती धोतियाँ रखी हुई थीं। उन्होंने आहिस्ता से धोतियाँ परे सरकाईं। धोतियों के नीचे सादे कागज के तवे रखे थे, उन्हें निकालते हुए सत्तू ने पाया कि वे सड़ गए थे और छूने भर से टूट रहे थे। कुछ ऐसे भी कागज मिले

जिन पर कुछ लिखा हुआ था, जो कुछ इस तरह से लग रहे थे जैसे कागज बनने के बाद उन पर कुछ न लिखा गया हो बल्कि कागज लिखावट के साथ ही बनाया गया हो। सत्तू ने एक-एक करके उन कागजों को उठाया और पढ़ने की कोशिश की। उन्हें कुछ भी नहीं समझ में आया। उन्हें अपनी अब तक की सीखी-जानी भाषा उसे पढ़ने के लिए नाकाफी लगी। उन्होंने सारे कागजों को एक-एक करके कुछ इस तरह से उठाया जैसे तुरंत पैदा हुए बच्चे को उठा रहे हों और उन्हें दादी की एक धोती में तह करने लगे। सारे कागजों को उठाने के बाद उन्हें एक गुड़िया दिखी। गुड़िया हाथ के सिले हुए घाघरे में लिपटी हुई थी। गुड़िया के नीचे कपड़े का एक टुकड़ा बिछा हुआ था। सत्तू ने कपड़े का टुकड़ा हटाया और इसी के साथ उनकी साँसें जहाँ की तहाँ रुक गईं। उनकी आँखों में गाढ़ा धुआँ भर गया। जलन के मारे उन्होंने आँखें मींच लीं और एक गहरी साँस ली। इस साँस के साथ उनका सीना जकड़ उठा और उनके भीतर कुछ तड़-तड़ करके टूटने लगा। बक्से में वही आईना रखा हुआ था जो दादी की मौतवाले दिन की सुबह सत्तू के हाथों से फर्श पर गिर कर चकनाचूर हो गया था। सत्तू के मुँह से हैरत के मारे एक सिसकारी निकली।

आईने में नौ-दस साल की एक दुल्हन दिखाई पड़ रही थी। रोती हुई। खूबसूरत, बड़ी-बड़ी आँखोंवाली - प्यारी, नन्ही परी-सी। दुल्हन एक चौड़ी-सी पलँग पर बैठी थी। बगल में ताखे पर एक दिया जल रहा था। उस दिए की मद्धिम रोशनी में दुल्हन लड़की अपनी बड़ी डरी आँखों से इधर-उधर देख रही थी। फिर वह पलँग के नीचे उतरी। पलँग के नीचे एक किनारे पर लोहे का बक्सा रखा था। लड़की ने बक्सा खोला। उसमें से एक गुड़िया निकाली और उसके संग बोलने-बतियाने लगी। तभी किवाड़ खुला और एक पैंतीस-छत्तीस साल का व्यक्ति भीतर आया। लड़की गुड़िया से बातचीत में इतनी मगन थी कि उसे पता ही नहीं चला कि कोई आ कर उसके सिरहाने खड़ा हो गया है। कमरे में आया आदमी एक कोने में खड़े हो कर लड़की को देखने लगा।

आदमी लड़की की तरफ बढ़ने ही वाला था कि गुड़िया ने लड़की को बता दिया कि उसका दूल्हा आया है। लड़की ने चौंक कर आदमी की तरफ देखा और गुड़िया को बिस्तर के नीचे डाल दिया। आदमी लड़की के पास आया पर उसके पास बैठने के बजाय बिस्तर के नीचे से कुछ खोजने लगा और गुड़िया को पा कर आदमी जोर-जोर से हँसने लगा। आदमी की हँसी से लड़की डर गई और दूर खिसक गई। हँसते-हँसते आदमी पलँग पर जा कर बैठ गया। बैठ कर उसने कहा कि अब तेरी शादी हो गई है। अब तू छोटी बच्ची नहीं रही कि गुड़ियों से खेले। अब तू औरत है औरत। औरत माने

क्या होता है अब तुझे जानना चाहिए। यह कहते हुए आदमी ने लड़की की तरफ हाथ बढ़ाया। लड़की और दूर सरक गई पर आदमी के मर्द हाथों ने उसे सख्ती से अपनी तरफ खींच लिया।

लड़की ने डर के मारे आँखें मूँद लीं। आदमी की साँसें तेज होने लगीं। तेज उखड़ती साँसों के बीच उसने लड़की से कहा कि तुझे किसी ने यह बताया है या नहीं कि दुल्हन को अपने दूल्हे के सामने किस तरह से पेश आना चाहिए। लड़की अपने में सिमटी रही तो आदमी ने झटके से उसका घूँघट खींच दिया, जो उसने आदमी को देखते ही ओढ़ लिया था। फिर आदमी ने गुड़िया का घाघरा उठाया और उँगली से जाँघों के बीच की जगह दिखाते हुए बोला, 'इसके यहाँ तो कुछ है ही नहीं, इधर आ देखूँ तो तेरे पास कुछ या तेरे पास भी कुछ नहीं है।' लड़की रोने लगी। बदले में आदमी ने उसे डाँटा। लड़की और जोर से रोने लगी। आदमी ने थप्पड़ मारा और कहा, चुप, अब आवाज निकली तो मुँह सिल दूँगा और इसी के साथ वह लड़की की धोती खींचने लगा। पल भर बाद लड़की बिस्तर पर नंगी पड़ी थी। आदमी उस पर कुछ इस तरह से पिल पड़ा था जैसे वह लड़की से कोई पुराना बदला चुका रहा हो। लड़की के मुँह से चीख निकली तो आदमी ने लड़की के मुँह में उसी का साया ठूँस दिया। इसके बाद लड़की के मुँह से चीख नहीं निकली, पर उसकी आँखें निकल आईं और पलँग के नीचे गुड़िया के पास जा कर गिर गईं। आदमी को इसके बारे में कुछ पता ही नहीं चला और इसी के साथ आईने में दृश्य गायब हो गए।

सत्तू ने एक तकलीफदेह झटके की तरह जाना कि वह लड़की दादी हैं और वह आदमी दादा हैं। सत्तू को दादा के ऊपर घृणा हो आई। उससे बहुत अधिक जितना कि वह अपनी दादी से करते थे। उन्हें याद आया कि आखिरी दिनों में दादी दादा को किस तरह से गालियाँ बका करती थीं। आखिरी दिनों में अपाहिज हो चुके दादा कभी-कभी ही जवाब देते, नहीं तो चुप्पी लगा जाते। दादी गालियाँ बकती रहतीं और दादा सर झुकाए बैठे रहते। जब दादा मरे तो दादी की आँखों में एक बूँद भी आँसू नहीं आया था। दादी तीन दिनों तक झूठ-मूठ का रोती रही थीं और जोर लगाती रही थीं कि आँसू आ जाएँ पर आँसुओं को न आना था, न आए। जोर लगाते-लगाते तीसरे दिन आँखों से खून जरूर आने लगा।

पल भर में ही सत्तू के लिए सारी चीजों के अर्थ बदल गए। तभी उन्होंने आईने में एक दूसरा दृश्य देखा। घनी अँधेरी रात में एक बूढ़ी औरत दीवाल से चिपकी छिपकली की तरह डोल रही है और गालियाँ बक रही है कि उसे पाखाना जाना है और हरामजादी सो रही है। तभी दृश्य में एक तरफ से दादी ढिबरी ले कर आती दिखाई पड़ीं। युवा दादी

बूढ़ी औरत के पास आ कर बोलीं, चलो दीदी और उनका हाथ पकड़ कर घर के बाहर निकल आईं। आईने के भीतर ढिबरी की मद्धिम रोशनी में सत्तू को एक छोटी-सी गड़ही दिखाई पड़ी और इसी के साथ उस बूढ़ी औरत को पानी में धक्का मारती दादी दिखाई पड़ीं। इसी के साथ ढिबरी बुझ गई। शायद पानी के छींटे उस पर भी पड़े हों। पल भर के लिए आईने में काला ही काला दिखाई पड़ने लगा और इसी के साथ आईने में अगला दृश्य उभर कर सामने आया।

सुबह का समय है। बूढ़ी औरत की लाश जमीन पर रखी हुई है। दादी पत्थर की तरह लाश के पैरों के बगल में बैठी हैं और रो रही हैं। एक औरत पूछती है तो दादी बताती हैं कि 'कल से ही पेट खराब था। जरा-जरा सी देर पर मैदान जा रही थीं। पता नहीं रात में कब मेरी आँख लग गई और बिना मुझे बताए ही बाहर निकल गईं। जब मेरी आँख खुली तो मैंने पुकारा। जब कोई जवाब नहीं आया तो पहले तो यही लगा कि थोड़ा आराम मिला होगा और दीदी सो गई होंगी। पर तुरंत ही मैं चौंक कर उठी। मुझे लगा जैसे कोई मेरा गला दबा रहा हो। मैं उठ कर दीदी की तरफ भागी। दीदी बिस्तर पर नहीं थी। मैंने ढिबरी जला कर पूरा घर छान मारा। तब जा कर बाहर का ख्याल आया। बाहर भी दीदी कहीं नहीं मिलीं तो भागती हुई गई और रामबरन काका को जगाया। तब तक उजाला भी होने लगा था। जब दीदी को खोजते हुए काका के साथ गड़ही की तरफ गई तो देखा दीदी गड़ही में उतराई हुई थीं। और इसी के साथ दादी जोर-जोर से रोने लगीं। रोते-रोते दादी बेहोश हो गईं और कुछ औरतें दादी को टाँग कर दूर ले जाती दिखाई पड़ीं। इसी के साथ आईने में फिर से अँधेरा छा गया।

आगे सत्तू की कुछ और देखने की हिम्मत नहीं पड़ी। उन्होंने आईना उठाया और नीचे गिर जाने दिया और बैठ कर आईने के टुकड़े बटोरने लगे।

ऊपर के दृश्य सत्तू को टुकड़ों में दिखाई पड़े थे। यूँ तो उनका अपना आईना भी दृश्यों को टुकड़ों में ही दिखाता था पर चूँकि वह खुद उन टुकड़ों का एक हिस्सा थे इसलिए वह बिना किसी अतिरिक्त प्रयास के सारे टुकड़ों को जोड़ कर एक मुकम्मल तस्वीर बना लेने में सक्षम थे। हालाँकि वे तस्वीरें कितनी मुकम्मल थीं, यह भी उन्हें आज ही पता चला। पर दादी के दृश्यों के साथ तो उन्हें बहुत मेहनत करनी पड़ी। एक-एक दृश्य को उन्हें अपने जेहन में कई-कई बार देखना पड़ा। उन्हें बहुत कुछ जोड़ना पड़ा। सारी चीजों को नए सिरे से तरतीब देनी पड़ी। इसके बाद भी सत्तू पुख्ता रूप से कुछ भी कह सकने की हालत में नहीं आ पाए। इसमें उनकी मदद की दादी की ननद ने।

दादी की ननद ने उन्हें बताया कि उनकी एक बहन और थी जो विधवा हो गई थी तो उसके ससुरालवाले उसे हमेशा के लिए यहीं छोड़ गए थे। उनका नाम था सुरजा। तो सुरजा दीदी को रात-रात भर नींद नहीं आती थी। वह पूरी-पूरी रात किसी काली छाया की तरह बाहर भीतर डोलती रहतीं। जब दादी इस घर में आईं तो तब तक सुरजा दीदी को रतौंधी भी हो चुकी थी। नींद उन्हें अब भी नहीं आती थी। वह रात भर दीवार पकड़े-पकड़े इधर से उधर घूमती रहतीं। दादी जब नई-नई आईं तो जब वह सुरजा दीदी को अँधेरे में हाथों से दीवाल पकड़ कर चलते हुए देखतीं तो डर के मारे उनकी चीख निकल जाती। इस बात के लिए दादा ने उन्हें कई बार पीटा भी पर उनका डर आखिर तक नहीं गया।

ऐसे ही समय गुजरता गया। जैसे आम के पेड़ों में बौर आते हैं, फूलवाले पौधों में फूल खिलते हैं जैसे पेड़ों से पत्तियाँ झड़ती हैं उसी तरह से दादा बार-बार कमा कर वापस लौटते। एकाध महीने रहते फिर वापस लौट जाते। ये एकाध महीने दादी पर बहुत भारी गुजरते। दादा का हाथ खुला हुआ था। दिन में एकाध ऐसा मौका आ ही जाता जब दादा दादी पर हाथ छोड़ देते। हर बार दादा के जाने के बाद दादी का पेट फूलने लगता। हर बार दादा के आने के पहले दामन में एक गुड़िया और बढ़ जाती। हर बार इसके लिए दादा से उन्हें भयानक रूप से मार खाना होता। हर बार उन्हें दादा से धमकी मिलती कि वह उन्हें अपने साथ ले जा कर किसी रंडीखाने में बेच देंगे और फिर से शादी कर लेंगे। ऐसी औरत का क्या मतलब जिसके रहते वंश ही न चले।

आखिरकार दादा ने अपनी विधवा बहन के साथ मिल कर भयानक साजिश रची और इसके बाद साल भर के भीतर ही दादी की सात बेटियों में से पाँच एक-एक करके बगल की गड़ही में उतराती पाई गईं। और इसी के थोड़े दिनों बाद सुरजा दीदी भी। सुरजा दीदी भी उसी चुड़ैल का शिकार हो गईं जिसे उन्होंने दादी की बेटियों के लिए पैदा किया था। बाद में पिता हुए पर दादी पिता को जब भी देखतीं उन्हें उनके पीछे खड़ी अपनी बेटियों की लाशें दिखतीं। सफेद पड़ी, फूली हुई भयावह लाशें। उनकी खुली हुई बड़ी-बड़ी आँखें दिखाई पड़तीं। वह उन्हीं मुर्दा आँखों से दादी को अविकल ताकती रहतीं जिनमें अब कोई प्रतिबिंब नहीं बनता था। दादी बावली हो जातीं। वह पागलों की तरह आगे बढ़तीं और बेटियों को प्यार करने लगतीं। पिता इधर-उधर देखते और रोने लगते। वह दादी को अपने छोटे-छोटे हाथों से पकड़ते और रोते हुए उन्हें अपनी तरफ खींचते। दादी को अपने और अपनी बेटियों के बीच कोई खलल बर्दाश्त नहीं होती और वह पिता को अपने से परे धकेल देतीं।

सत्तू जब इन सारी चीजों को जोड़ने की कोशिश कर रहे थे तो उन्हें दादी की पाँचों मरी हुई बेटियाँ दिखाई पड़ीं और उन्हीं के पीछे थोड़ी दूर पर खड़ी दादी की अंधी ननद। सत्तू ने उन सबका चेहरा देखने की कोशिश की तो वहाँ उन्हें एक अबूझ अँधेरा दिखाई पड़ा। इसके बाद उन्होंने यह कोशिश बंद कर दी। इसके बाद बिना कोशिश के ही उनको दादी का रातों का रोना याद आया जिसमें पिता और माँ दोनों को समान रूप से मनहूसियत दिखाई पड़ती थी। आखिरी दिनों में दादी को रात में कुछ भी दिखना बंद हो गया था। वे लगभग अंधी हो गई थीं। अपनी अंधी आँखों से दादी रात भर रोतीं। क्या दादी को अंधी आँखों से भी अपनी मेरी मरी हुई बेटियाँ दिखती रही होंगी। और फिर दादी क्या कभी अपनी उस ननद के लिए भी रोई होंगी।

फिर सत्तू ने सोचा कि पिता दादी की सारी बातें आँख मूँद कर क्यों मान लेते थे? उन्होंने कभी सत्तू या उनकी माँ का पक्ष जानने की कोशिश क्यों नहीं की? पिता अगर अपने पिता के बेटे थे तो अपनी माँ के भी - तो फिर उनमें वह विद्रोह क्यों नहीं पनपा जो दादी के भीतर ज्वालामुखी बन कर पैदा हुआ था या जो सत्तू के भीतर तेजाब की बारिश बन कर बरसता था। क्या यह नहीं हो सकता कि पिता दादी का बदला सत्तू और उनकी माँ पर उतारते रहे हों और उनका विद्रोह अपने से कमजोर के दमन में बदल जाता रहा हो और फिर दादी ही कहीं अपनी बेटियों का बदला बेटे से तो नहीं चुका रही थीं।

सत्तू को फिर एक दृश्य दिखा। उन्हें अपने पिटने का दृश्य दिखा। मिट्टी और कंकड़ के बीच लिथड़े छोटे सत्तू दिखे, डबडबाई आँखों से तेरह सत्ते इक्यानबे बोलते हुए। ठीक तभी सत्तू ने पलट कर पिता की तरफ देखा तो बिल्कुल उसी तरह मिट्टी और कंकड़ में लिथड़े छोटे पिता दिखे और बगल में तन कर बैठी दादी भी। यह क्रूरता की श्रृंखला कितने दिनों से चली आ रही है... कितनी सदियों से..., सत्तू ने सोचा। क्या दादी और पिता की जगह कभी सत्तू भी दिखाई पड़ेंगे और कोई दूसरा उन्हें ऐसे ही डबडबाई आँखों से देखेगा।

सत्तू इस सबके बारे में जितना ही सोच रहे थे उतना ही गड्डमड्ड होते जा रहे थे। जैसे सत्तू ने अपने दादा का चेहरा याद करने की कोशिश की तो उन्हें दादा का चेहरा नहीं याद आया। उसकी जगह उन्हें अपने पिता का चेहरा याद आया। उन्हें पिता से अपने ऊपर पड़ी मार याद आई। उन्हें अपनी नई-नकोर जींस याद आई और उन्होंने जींस की तलाश में ऊपर की ओर देखा। वहाँ से जींस गायब थी। दादी के मरने के दूसरे दिन गाँव के दो-तीन लड़कों ने जींस में लग्गी से आग लगा कर उसे जला डाला था।

तेरही के तीसरे दिन सत्तू वापस इलाहाबाद लौटे। कमरे पर पहुँचे। धूल और जाले साफ किए। किताबों पर पड़ी गंदगी साफ की। अजग-गजब पोस्टर और किताबें निकाल कर रद्दी में फेंका। अपने लेटने के तख्त की जगह बदली। पढ़ने के कुर्सी-मेज की जगह बदली और इस तरह करीब दो-तीन घंटे की मेहनत के बाद कमरे को एक नई तरतीब दे डाली। इसके बाद सत्तू कमरे से नीचे आए, सामने की दुकान से एक मैगी खरीदी, कमरे पर आ कर बनाई, खाई और सो गए।

जब उनकी नींद खुली तो शाम हो चुकी थी। उठे, मुँह, धोया, कपड़े पहने और बाजार निकल गए। बाजार जा कर उन्होंने एक जींस खरीदी। गहरे आसमानी रंग की जींस और धुँधले नीले रंग का जींस का ही जैकेट। जींस ले कर वह कमरे पर पहुँचे। कमरे पर पहुँच कर उन्होंने सब खिड़की-दरवाजे बंद कर दिए। कपड़े उतारे और उनकी जगह नए कपड़े पहने। नए कपड़े पहन कर आदतन उन्होंने अपने आईने की तरफ देखा। तब उन्हें याद आया कि आईना तो घर जाते हुए ही टूट गया था। सत्तू ने कमरे में इधर-उधर नजर दौड़ाई तो उन्हें सामने की रैक पर एक छोटा-सा आईना दिखाई पड़ा पर सत्तू का मन छोटा आईना देखने का नहीं हुआ। वह वैसे ही नए कपड़े पहने हुए बिस्तर पर बैठ गए। फिर अचानक पता नहीं क्यों सत्तू रोने लगे।

थोड़ी देर तक सत्तू रोते रहे फिर उठे, बाथरूम में जा कर मुँह धोया, सूखे तौलिए से मुँह पोंछा, सामने रैक पर पड़ा आईना उठाया। अपने चेहरे को ध्यान से देखा, हैंगर पर टँगी हुई टोपी उठाई, घुटे हुए सिर पर पहनी और कमरे में ताला लगा कर बाहर सड़क पर निकल आए।